

अहले मज़हब की तरफ़ से मज़हब की ज़रूरत पर बड़ा जोर दिया जाता है लेकिन रौशन ख़याल तबके में से बाज़ लोगों का ख़याल है कि यह मानी हुई हकीक़त है कि इंसानी फ़ितरत में एक पेशीदा कुव्वत मौजूद है जिसका नाम ज़मीर है। उसमें मज़हब के काएम मक़ाम बनने की सलाहियत है। यह ताक़त तमाम हालात में हमारे हरकात व सकानात की कड़ी निगरानी करती, हमें हमारे फ़राएज़ की तरफ़ तवज्जो दिलाती, जुल्म व ज़ौर और हर किस्म के ख़िलाफ़े अख़लाक़ कामों से बाज़ रखती, अच्छाईयों की तरफ़ दावत देती और बुराईयों से रोकती, हमारे पस्त और रकीक़ कामों से उसे सख़्त दुख़ पहुँचता है। जब आदमी कोई मनाफ़िए इंसानियत काम करता, किसी कमज़ोर और बेबस को अपने जुल्म व सितम का निशाना बनाता है तो ज़मीर अपनी अदालत में उसे तलब करके फ़ैसला करता और उसको मुस्तौजिबे सज़ा क़रार देता है। बेशक़ ज़मीर की तरफ़ से कोई ज़ाहिरी और जिस्मानी सज़ा नहीं दी जाती, वह बातिनी और रूहानी सज़ा देता, मुजरिम के दिल व दिमाग़ को बेचैन करता, उसको पैहम मलामत और सरज़निश के चरके लगाता, उसकी खुशगवार और शीरीं ज़िन्दगी में तल्ख़ी पैदा कर देता है अगर ज़मीर बहुत जानदार या जुर्म बहुत ज़्यादा संगीन है तो कभी ये सज़ा मुजरिम की ज़िन्दगी को तहोबाला कर देती है, वह बीमार पड़ जाता, पागल हो जाता, खुदकुशी कर डालता है। तमाम लोगों के ज़मीरों को इल्मे नफ़स के

उसूल के मुताबिक़ ज़िन्दा और ताक़तवर बनाया जा सकता है तरबियते ज़मीर के बाद मज़हबी उसूल और तालीमात की ज़रूरत बाकी नहीं रहती, जो काम अम्बिया व मुरसलीन के हाथों अंजाम पाता है उसी की तकमील अकेला हमारा ज़मीर कर देगा।

इस ऐतेराज़ के तशफ़्फ़ी बख़्श तौर से दूर होने के लिए मुनदर्जा ज़ेल उमूर की तैज़ीह ज़रूरी है।

1—ज़मीर यानी चे?

2—ज़मीर के मुख़्तलिफ़ दर्जे।

3—फ़सलए अक्ल और ज़मीर।

4—आदात व रवासिम का ज़मीर से तअल्लुक़।

5—ज़मीर की आवाज़ और तक़रारे अमल।

6—क्या ज़मीर को धोखा दिया जा सकता है?

7—दूसरे फ़ितरी जज़बात और ज़मीर के दरमियान तसादुम।

1&t e h j D ; k g \

इसमें कोई शक़ नहीं कि इतना हर शख़्स महसूस करता है कि मुझमें एक पोशीदा कुव्वत मौजूद है जो मेरी रफ़तार व गुफ़तार, यहां तक़ कि मेरे नज़रियात व अफ़कार की निगरां है। यह सही है कि सब लोग इस हकीक़त को यक़सां तौर पर नहीं महसूस करते हैं लेकिन ऐसा कोई सही दिमाग़ नहीं मिलेगा जो इस कुव्वत के वुजूद का इंकार करे।

यह पोशीदा ताक़त कभी चैन से नहीं बैठती, हम सब महसूस करते हैं कि वह बराबर हमें अच्छे कामों की तरफ़ मुतावज्जे करती है और बुरे कामों से बाज़ रखती है। वह पैहम बलन्द आवाज़ से हमसे कहती है:—

अहद शिकनी न करो, जुल्म व तअदी के पास न जाओ। कमजोरों की मदद करो। एक दूसरे के साथ नरमी से पेश आओ, जिन लोगों की गोद में तुमने परवरिश पाई है, जिन्होंने तुम्हारी तालीम व तरबियत का बोझ अपने कांधों पर उठाया है उनकी ताज़ीम करना तुम्हारा फ़रीज़ा है, तुम्हें हमेशा हक़ शनास, पाकदामन और रास्तगो होना चाहिए। अगर ज़मीर के तकाज़े के खिलाफ़ हम कोई काम करना चाहते हैं तो वह हमसे जंग पर फ़ौरन तैयार हो जाता और हमारे दिल व दिमाग़ की फ़ज़ाओं में एक तूफ़ान, एक इंक़ेलाब, एक अज़ीम तहो बालगी पैदा कर देता है, वह अंदरूनी तूफ़ान आंखों से ओझल रहता है लेकिन उसके असरात निगाहों के सामने होते हैं, इस इंक़ेलाब की गम्माजी, चेहरे का उड़ा हुआ रंग, मिज़ाज में चिड़चिड़ापन करता है। रातों की नींद उड़ जाती है, दिलो दिमाग़ सही तौर पर काम नहीं करते। इसके बिलमुकाबिल अगर किसी काम के इरादे के वक़्त हमारे दिल व दिमाग़ में कोई तूफ़ानी कैफ़ियत न पैदा हो, हमारी रूह बिल्कुल साकिन और मुतमइन हो, तो उसके मानी यह है कि हमारा ज़मीर हमारे इरादे का हम आहंग और हमक़दम है। इंसान की सरकशी जब ज़मीर की आवाज़ की तरफ़ मुतावज्जेह नहीं होने देती और इंसान तकाज़ाए ज़मीर के खिलाफ़ कोई काम कर बैठता है तो वह फिर सरज़निश पर आमादा होता है, इंसान पर एताराज़ की बौछार शुरू कर देता, अपने इस इक्दाम से वह इंसान के दिल को तकलीफ़ पहुंचाता, अपनी अदालत से उसके खिलाफ़ फ़ैसला सादिर करता, उसे रूहानी सज़ा देता, उसकी रूह को कोड़े लगाता और उसे तौबा पर तैयार करता है।

अकसर देखा गया है कि लोग किसी जुर्म के इरतेकाब के बाद बहुत ज़्यादा पशीमान होते हैं। उन्हें ऐसा महसूस होता है कि जैसे उनके दिल व दिमाग़ में आग लगी है, उनकी रूह झुलसी जा रही है, जैसे किसी ने उनके जुर्म की हौलनाक फ़िल्म बना ली है, जिसे वह थोड़े-थोड़े वक़फ़े से मुजरिम की आंखों के सामने ले आता है, जैसे उस मज़लूम और बेगुनाह के वह आखिरी दिलख़राश फ़िकरे जिनसे उसने रहम की इल्तेजा की थी किसी ने रिकार्ड कर लिए हैं जिन्हें वह कभी—कभी मुजरिम को दिखा देता है।

ज़मीर की तकलीफ़ देह हरकतों से छुटकारों की खातिर कभी मुजरिम अपने को खुद अदालतों में पेश करके इक़्ारे जुर्म कर लेते हैं, क़ानून की तलवार के नीचे अपने हाथ से अपना गला रख देते, जिस ख़न्जर से किसी मज़लूम की ज़िंदगी को ख़त्म किया था उसी से अपना सीना चाक कर डालते हैं।

दूसरी जंगे अज़ीम में जिस फ़ौजी अफ़सर ने ऐटम बम से जापान के दो शहरों को चंद लमहों में तबाह व बर्बाद कर डाला था, उसका किस्सा सबके पेशे नज़र है। यही हुआ कि उसने बम फेंक कर आबाद शहर को मिनटों में खण्डर बना दिया, हज़ारों बेगुनाह अख़खास, शीर ख़्वार बच्चों, अस्पतालों के बेबस मरीजों और बे ज़बान जानवरों को नीस्त व नाबूद कर दिया, लेकिन अब ज़मीर के दबाव ने उसे पागल बना दिया है। एहसासे जुर्म ने मुजरिम के दिल व दिमाग़ में इंक़ेलाब पैदा कर दिया।

इसके बर खिलाफ़ इंसान जब किसी अच्छे काम का अज़्म करता है तो ज़मीर उसे मज़ीद रग़बत दिलाता, ऐसे काम के अंजाम पा जाने के बाद ज़मीर शाबाश कहता और

तारीफ़ करता, एक मर्तबा नहीं, जब कभी इंसान को अपना वह काम याद आता तो ज़मीर आगे बढ़कर उसकी मदद करता है। इसी लिए ऐसे मौके पर इंसान के दिल में मुसर्त व इबेसात, गुरुर व सरबलंदी के ऐहसास से एक तमव्वुज (लहेर) पैदा हो जाता है। आदमी जब किसी अच्छे या बुरे काम के अंजाम देने में मसरूफ़ होता तो ज़मीर उस मौके पर इतमिनान से नहीं बैठता बल्कि पूरी ताक़त से अपना फ़रीज़ा पूरा करता है। पहली सूरत में इंसान को सहारादेकर उस नेक काम की तकमील करता और दूसरी बाज़ सूरत में उसे बोज़ रखने के लिए अपनी एडी चोटी का जोर सर्फ़ कर देता है अच्छे कामों के अंजाम देने के बाद इंसान में जो रूहानी बालीदगी पैदा होती वह उसी ज़मीर की कार गुज़ारी का नतीजा है। यूँही पस्त और रकीक कामों की अंजाम देही के मौके पर इंसान का तज़बज़ुब, उसके चेहरे का उड़ा हुआ रंग, उसके हाथों की थरथराहट, उसकी ज़बान की लुकनत, उसके पैरों की कपकपाहट, उसके दिल की धड़कन, इसी ज़मीर की मोअस्सर कार गुज़ारी के असरात हैं।

शायद सिवाए इन आसार के ज़मीर की कोई हमागीर तारीफ़ मुमकिन नहीं है जामे तारीफ़ की कोशिश भी ज़रूरी नहीं है, क्योंकि रूह और दूसरी बातिनी कुव्वतों की तरह ज़मीर भी एक पेशीदा हकीकत है जिसके पहचनवाने के लिए उसके आसार का सहारा लिया जा सकता है। कमाल से इश्क़ व मुहब्बत, नक्स व ऐब से नफ़रत इंसानी फ़ितरत का तकाज़ा है। मुमकिन है कि हकीकते ज़मीर इसी कुदरती तकाज़े की एक झलक हो। बहर हाल यह बात यकीनी है कि फ़ितरते बशरी में इस तरह की कुव्वत मौजूद है जिसके मख़सूस और नुमायां

असरात हर शख्स महसूस करता है।

2&ejkfr: tehj dk b[krykQ

तमाम इंसानों के ज़मीर की कुव्वत यकसॉ नहीं है। ज़मीर की ताक़त और कमज़ोरी के लिहाज़ से ऐसे अफ़राद तक के दरमियान तफ़ावुत नज़र आता है जिन्होंने एक तरह के माहौल में परवरिश पाई और ज़िंदगी बसर की, जो अपनी उम्र और अपने मालूमात की मिक्दार के लिहाज़ से एक दूसरे के बराबर हैं। वाक़िया यह है कि ज़मीर की हुक्मत हमारी आम हुक्मतों से शबाहत रखती है। बाज़ लायक़ और बाज़ ना लायक़ हैं कुछ ताक़तवर और कुछ कमज़ोर हैं। बाज़ लोग किसी यतीम बच्चे की आंखों को अश्क़बार देख कर बेचैन हो जाते हैं। किसी मज़लूम, बे ख़ता के रूख़सार पर तमांचा पड़ना उनके दिल को तहो बाला कर देता है अगर खुद उनके हाथ से किसी पर मामूली सी ज़ियादती हो जाए तो मुद्दतों इसी की फ़िक्र में रहते और किसी तरह उसे भूलते नहीं हैं। उनके मुक़ाबिल ऐसे अफ़राद भी नज़र आते हैं जिनकी आंखों ने ख़ाको खून में लोटते हुए बेगुनाह इंसानों के लाशे देखे हैं, कुछ देर उनका दिल बेचैन रहा। वह इज़हारे अफ़सोस करते रहे और उसके बाद इस तरह अंजान हो गए जैसे उनके सामने कुछ हुआ ही न हो। इसी दुनिया में ऐसे सख़्त दिल अफ़राद भी हैं जिनके ज़मीर बिल्कुल मुर्दा हो चुके हैं, वह बड़े से बड़े जुर्म का इर्तेकाब करते हैं लेकिन उनके दिल में हल्की सी लरज़िश भी पैदा नहीं होती, वह कोई बेचैनी महसूस नहीं करते। यह सही है कि ज़मीर एक फ़ितरी कुव्वत है लेकिन ऐसा नहीं है कि वह तग़य्युर व तबहुल के काबिल न हो। इल्मी और इल्मी तरबियत से मोअस्सर तलकीन और

तालीम से मुर्दा ज़मीर को ज़िन्दा किया जा सकता, उसकी कमज़ोरियों को दूर करके उसे ताक़तवर बनाया जा सकता है। इसी तरह मुमकिन है कि अगर बराबर ज़मीर के तकाज़ों के खिलाफ़ अमल दरआमद होता रहे, उसके तकाज़ों को मुसलसल मुस्तरिद कर दिया जाता रहे तो रफ़ता-रफ़ता उसकी आवाज़ धीमी हो जाए, उसका ज़ोर घट जाए।

3& tehj vkj vDy dk Qilyk

बाज़ लोगों ने इंसानी ज़मीर को एक मुनसिफ़ (जज) से तशबीह दी है। यह तशबीह बाज़ हेसियतों से दुरुस्त है। लेकिन उसमें एक बड़ा अजीब भी है, वह यह कि दूसरे जजों के पास सोचने और समझने की कुव्वत है मगर ज़मीर नेकी और बदी की तशख़ीस में अक्ल का मोहताज है, अच्छाई और बुराई का फ़ैसला खुद नहीं कर सकता। दूसरे अलफ़ाज़ में यूँ कहा जाए कि ज़मीर किसी कुव्वते इदराकी का नाम नहीं है।

इदराकात सिर्फ़ अक्ल के वसीले से हासिल होते हैं। इंसान अक्ल व फ़िक्र से सहारा लेकर अच्छाई और बुराई का फ़ैसला करता, उसके बाद ज़मीर अपनी जगह से उठ कर उन अच्छाईयों के बजा लाने की दावत देता और उन बुराईयों के इस्तेकाब से रोकता है जिनके मुताल्लिक अक्ल पहले फ़ैसला कर चुकी है। इसका नतीजा वाज़ेह है कि अगर नेक व बद के दरमियान इस्तेयाज़ में अक्ल से चूक हो गई तो उसकी पैरवी की वजह से यकीनन ज़मीर भी गुमराह हो जाएगा। इस मतलब की वज़ाहत के लिए मुंदरजा ज़ेल मिसाल की तरफ़ तवज्जो फ़रमाइये। आप इस ज़माने में देख रहे हैं कि दो बड़े सियासी मुल्कों के तरफ़दार, सरमाया दारी और कम्युनिज़्म के हामी एक दूसरी के मुक़ाबिल

सफ़ बस्ता हैं। एक तरफ़ के फ़लसफ़ी दूसरी तरफ़ के फ़लसफ़ियों के मुक़ाबिल, एक ग़िरोह के साइन्सदां दूसरे ग़िरोह के साइन्सदानों के मुक़ाबिल, एक मसलक के सियासी लीडर दूसरे मसलक के सियासी लीडरों के मुक़ाबिल, एक जमाअत के इन्शा परदाज़ दूसरी जमाअत के साहिबाने कलम के मुक़ाबिल, एक तरफ़ की फ़ौजें दूसरी तरफ़ की फ़ौजों के सामने इस्तादा (खड़ी) हैं। दोनों गिराहों के दरमियान सर्द व गर्म जंग छिड़ी हुई है। हर एक इल्मी और जंगी हथियारों से दूसरे को शिकस्त देने के लिए कोशां है। मुमकिन है कि दोनों गिराहों के दरमियान बकसरत ऐसे अशख़ास मौजूद हों जो उन दोनों सियासी मुल्कों में से किसी को सही न समझते हों।

उन्हें किसी एक की तरफ़दारी पर उनके शख़्सी मुनाफ़े ने आमादा किया हो। लेकिन इससे भी इंकार नहीं किया जा सकता कि दोनों तरफ़ की सफ़ों में ऐसे अफ़राद ज़रूर मौजूद हैं जो अपने मसलक को सही समझते हुए इसकी हिमायत कर रहे हैं, मशरिक व मगरिब के इन्शा परदाज़ों के नताएजे कल्मी के सरसरी मुताल्लिए से इ स बात की तसदीक़ की जा सकती है। हम देख रहे हैं कि उनमें से हर एक दूसरे को नीस्त व नाबूद करने में फ़ख़्र महसूस कर रहा है, हर एक दूसरे के तहस नहस करने के लिए अपनी कोशिशों को इंसानियत की बहुत बड़ी ख़िदमत समझ रहा है। इससे पता चलता है कि हर एक का ज़मीर इसके इक्दामात को पसंद कर रहा, हर एक का ज़मीर दो मुख़तलिफ़ रास्तों को तै कर रहा है। इसी बिना पर दोनों ग़िरोह खुश और मुतमइन हैं, कोई भी अपने मुजरिम को नहीं समझ रहा है।

यह मन्ज़र उस वक़्त हमें क्यों नज़र आ रहा

है? वजह ये है कि हर एक का ज़मीर उसकी अक्ल व फ़िक्र के फ़ैसले की पैरवी कर रहा है। ज़ाहिर है कि हकीकत दो मुख़्तलिफ़ सिमतों में नहीं हो सकती। यकीनन इन दोनों मसलकों में से कोई एक या दोनों नुक्ते सेहत से हटे हुए हैं, किसी ग़िरोह की कुव्वत फ़ैसले से चूक हो गई है। इसी चूक ने ज़मीर को भी ग़लत रास्ते पर ग़ामज़न बना दिया है।

4&jokflek vknkr l t.ehj dk rvYyd

माहौल और आम रवासिम व आदात भी ज़मीर के रुजहानात पर असर अंदाज़ होते हैं अक्सर औकात बहुत सी ग़लत बातें समाज का जुज़ बन जाती हैं। उनके उमूमी रवाज की वजह से उनका वाकई और हकीकती नक्स आंखों से ओझल हो जाता है। इस किस्म के कामों के अंजाम देने के बाद बहुत कम लोग मिलेंगे जिनका ज़मीर बेचैनी महसूस करे। इक्का-दुक्का आदमी दस्तयाब हो सकते हैं जिनकी अक्ले फ़ितरी के हाथ पाओं ने रवासिम व आदात की ज़न्जीरों को तोड़ डाला और उन्हें सौ फ़ीसदी सही और आज़ाद फ़ैसला करने पर क़ादिर बना दिया है। मसलन जो लोग जानवरों को ज़िबहा करना, उनका गोश्त खाना मज़हबी तौर पर ममनू समझते हैं किसी जानवर के गले पर छूरी चलना या उसका गोश्त खाना उनके ज़मीर को बेचैन कर देता है, उसके बर ख़िलाफ़ मुसलमानों के माहौल में यह बातें उमूमन राइज हैं और उन्हें उनसे कोई ना गवारी महसूस नहीं होती।

यह दुरुस्त है कि हमारे बाज़ बरादराने वतन का यह ख़याल सही नहीं है। किसी हैवान के लिए इससे बढ़कर क्या कमाल हो सकता है कि वह अपने से बलंदतर मख़लूक के जिस्म का जुज़ बन जाए, जिस तरह ख़ाक के ज़र्रे

नबातात का जुज़ बनते, जिस तरह नबातात हैवानात का जुज़ व जिस्म क़रार पाते हैं, उसी तरह जानवर अगर अपनी मौजूदा सतहे वुजूद से मुन्तक़िल होकर किसी बालातर सतहे वुजूद तक पहुंचे तो क्या क़ाबिले ऐतेराज़ बात है। यह वही क़ानूने तकामुल है जो सारे जहाने आफ़रीनिश में नाफ़िज़ व राएज है। लेकिन अगर बिलफ़र्ज बरादराने वतन के इस तर्ज़े फ़िक्र को सही मान लिया जाए तो जानवरों के साथ हमारे बर्ताव से हमारे ज़मीरों के बेचैन न होने की वजह सिवाए इसके और क्या हो सकती है कि मुसलमानों के समाज में यह बर्ताव राएज हो गया है। आम तौर से कहा जाता है कि जब कोई बुरी बात समाज में दाख़िल हो जाए तो इसकी बुराई कम हो जाती है इसका मतलब यही है कि ऐसे पस्त समाज में रहने की वजह से हमारा ज़मीर इस पस्ती का आदी बन गया। इसकी कुव्वते फ़ैसला ज़ंग आलूद, उसकी चश्मे बसीरत कमज़ोर हो गई।



%cfd;k i:t u0 11 dk]]]]]]%

ज़ाहिर है यज़ीद ऐसे नौ उम्र की ज़बान से ज़ियाद ऐसे सिन रसीदा का इन अल्फ़ाज़ को सुनकर बर्दाश्त करना एहसासे कमतरी ही का नतीजा था जो नसबी एतेबार से उसमें मौजूद थी। फिर इस सूरत में ज़ियाद की नस्ल अब कभी मुआविया या उनके बाद यज़ीद के मुक़ाबले में सरताबी की कहाँ हिम्मत रख सकती थी। यह दूर रस असर था उस सियासी इक़दाम का जो ज़ियाद को भाई बनाकर किया गया था। चाहे शरीयत इस पर कितनी भी सरज़निश का मुस्तहक़ क़रार देती हो।